ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-5* Issue-12* January- 2021
Innovation The Research Concept

समकालीन हिन्दी कहानी में कामकाजी महिलाओं का शोषण

Exploitation of Working Women in Contemporary Hindi Story

Paper Submission: 08/01/2021, Date of Acceptance: 24/01/2021, Date of Publication: 25/01/2021

ऋषिपाल
सह प्राध्यापक एवं अध्यक्ष,
हिन्दी विभाग,
बाबू अनन्त राम जनता महाविद्यालय, कौल, कैथल
हरियाणा, भारत

सारांश

समकालीन शब्द वर्तमान का द्योतक है। यह शब्द किसी समय–सीमा में आबद्ध नहीं किया जा सकता। इसकी परिधि बहुत विस्तृत एवं व्यापक है। इसमें केवल वर्तमान का सत्य ही ध्वनित नहीं होता अपितु परम्पराओं की धड़कन और अदृश्य भविष्य की सम्भावनाएँ भी स्पन्दित होती हैं। 'समकालीनता' शब्द आज के नवलेखन में साहित्य की प्रत्येक विधा में प्रयुक्त हो रहा है, जैसे समकालीन कविता, समकालीन उपन्यास, समकालीन कहानी, समकालीन निबंध आदि।

"Contemporary" is a word which signifies the present. This word cannot be tied to any time limit. Its perimeter is very wide. In this, not only the truth of the present is sounded, but the beat of the traditions and the possibilities of the unseen future are also vibrant. The term 'contemporaneity' is being used in every genre of literature in today's new writing, such as contemporary poetry, contemporary novels, contemporary story, contemporary essays etc.

मुख्य शब्द : समकालीन, हिन्दी कहानी, नारी, परिवार।
Contemporary, Hindi Story, Women, Family

प्रस्तावना

'समकालीन' शब्द 'सम' उपसर्ग तथा 'कालीन' विशेषण के योग से निर्मित हुआ है। 'सम' उपसर्ग का प्रयोग प्रायः 'एक ही' अथवा 'एक साथ' के अर्थ में होता है। 'कालीन' का यहाँ अर्थ है – 'काल में' अथवा 'समय में।' अतः 'समकालीन' का सामान्यतया शाब्दिक अर्थ 'एक ही समय में होने या रहने वाले' के रूप में स्पष्ट होता है। शाब्दिक अर्थ के परिप्रेक्ष्य में 'समकालीन' का अभिप्राय वर्तमान से है जिसमें हम जी रहे हैं। डॉ. हरदयाल का मानना है कि, ''यदि कोई व्यक्ति अपने समय को अनुभव के स्तर पर ग्रहण कर लेता है तो वह समकालीनता के बोध से युक्त है। प्रत्येक जागरूक व्यक्ति अपने–अपने स्तर पर अपनी समकालीन भाव चेतनाओं को पहचानने का यत्न करता है। दूसरी ओर इतिहास का कोई भी महत्त्वपूर्ण क्षण किसी के पहचानने या न पहचानने से रुकता नहीं है। इस तरह से व्यक्ति की अपनी ही नियति उसकी पहचान से जुड़ी होती है।''[1]

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य समकालीन हिन्दी कहानी में कामकाजी महिलाओं का शोषण का अध्ययन करना है।

विषय विस्तार

हिन्दी कहानी ने समकालीन स्वरूप ग्रहण करने से पूर्व विकास के अनेक सोपानों को पार किया है, जैसे पूर्व प्रेमचन्द युग, प्रेमचन्द युग, स्वातन्त्र्योत्तर कहानी, कहानी आन्दोलन, नयी कहानी, अकहानी, सचेतन कहानी, सहज कहानी, समांतर कहानी, सक्रिय कहानी व समकालीन कहानी। नयी कहानी के बाद जितने भी कहानी आन्दोलन विभिन्न नामों और नारों के साथ आये, उन सबको हम समकालीन कहानी के अंतर्गत रख सकते हैं। समकालीन कहानी में आज के बहुमुखी जीवन यथार्थ को उसकी सम्पूर्ण तल्ख सच्चाईयों के साथ प्रस्तुत किया है। डॉ. पुष्पपाल सिंह के अनुसार, ''यथार्थ की ओर नया प्रयोग, परिवेश के प्रति अतिशय जागरूकता, नयी मूल्य दृष्टि, सम्बन्धों के

परम्परागत रूप को नकार, नया नैतिकता–बोध, स्त्री–पुरुष सम्बन्धों में दृष्टि का बदलाव, जीवन के आर्थिक पक्षों की प्रधानता, व्यवस्था के प्रति तीव्र रोष, विद्रोही स्वर और दुर्दम जिजीविषा, राजनीतिक परिप्रेक्ष्य, बौद्धिकता, नगर और महानगर की मुख्य कथा भूमियाँ आदि प्रमुख हैं। हर प्रकार की रोमांटिक प्रवृति, काव्यात्मक उपमान–शैली व बिम्ब–योजना को नकार कर जीवन के सहज–स्वाभाविक उपमान व बिम्ब इसकी चित्रात्मक व बिम्बांकन क्षमता की अभिवृद्धि कर इसे एक सहज सौन्दर्य प्रदान करते हैं।''[2] डॉ. धनंजय आज की कहानी के बदलाव को नयी सृजनात्मक भाषा का बदलाव मानते हैं।[3] समकालीन कहानी में पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक परिवेश और आधुनिकता के परिणाम स्वरूप सम्बन्धों में आए परिवर्तन का चित्रण हुआ। पारिवारिक संदर्भों में नारी के अकेलेपन, घुटन एवं संत्रास की भी सार्थक अभिव्यक्ति हुई है। दाम्पत्य सम्बन्धों में पुरुष की अमानवीयता और नारी की अवमानना एवं शोषण भी चित्रित हुआ है।

शोषण का सामान्य अर्थ है कि किसी का अन्यथा लाभ उठाना अथवा किसी की मेहनत मजदूरी न देना, किसी के धन पर अधिकार करना या किसी की मेहनत का अनुचित लाभ उठाना। नारी के शोषण के सन्दर्भ में नारी को प्रताड़ित करना, नारी को रीति–रिवाजों के बन्धनों से बांधना, नारी की स्वतन्त्रता का हनन करना, नारी की इच्छा के विरुद्ध उससे सम्भोग करना, नारी की इच्छाओं का दमन करना, नारी को मारना–पीटना, गालियाँ देना, नारी से असभ्य व्यवहार करना आदि इसके अन्तर्गत आता है। डॉ. राजेश रानी के शब्दों में, ''समाज में नारी को सदा से ही पुरुष से कमजोर माना जाता है। इसलिए पुरुष व उसका समाज भांति–भांति से उसका शोषण करता है। नारी को अपने मन की जिन्दगी नहीं मिल पाती है। नारी चाहती कुछ है और पाती कुछ है, और यही नारी की व्यथा है और यही शोषण है।''[4] नारी आदिकाल से लेकर आज तक पुरुष के शोषण का शिकार रही है। डॉ. शीला रजवार के शब्दों में, ''स्त्री पहले भी थी, आज भी वह परिवार, समाज अथवा सृष्टि की एक संयुक्त इकाई की अभिन्न अंग है। भविष्य में भी समाज के किसी भी अन्य वर्ग की भांति उसका यही लक्ष्य रहेगा। दरअसल उसकी लड़ाई इसी लक्ष्य को प्राप्त करने की लड़ाई है। समाज ने उससे अपना वह स्वत्व छीना है जिसके कारण वह अन्य वर्गों के साथ अपनी भागीदारी नहीं निभा पाई। उसे कभी नैतिक पवित्रता के नाम पर सामाजिक–धारा से काटकर रखा गया है।''[5]

समाज में नारी के अलग–अलग रूप हैं। वह माँ, पत्नी, बहन, बेटी, प्रेमिका आदि अनेक रूपों में समाज में कार्यरत है। बालिका, किशोरी, विवाह योग्य, चिरकुंवारी, पति–परित्यक्ता, विधवा आदि नारी के अनेक रूप हैं। वह गृहिणी भी है और कामकाजी भी। परिवार, समाज, राजनीति, धर्म आदि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में नारी तरह–तरह की भूमिकाएँ निभाती है। घर में रहते हुए अथवा बाहर का कामकाज करते हुए, गृहिणी का कर्त्तव्य निभाते हुए अथवा दफ्तर की नौकरी करते हुए नारी का शोषण होता ही है। वह लाख प्रयत्न करे, इस शोषण से मुक्त नहीं हो पाती। आज का पुरुष तरह–तरह के मुखोटे लगाए घूमता है और जहाँ जैसी सम्भावनाएँ होती हैं, स्त्री को अपने जाल में फंसाकर उसका शोषण करने का प्रयास करता है। उसका सोचना है कि नारी कहीं भी पहुंच जाए पुरुष का साथ उसके लिए आवश्यक है। पुरुष के संरक्षण में ही नारी आगे बढ़ती है। इसलिए पुरुष को उसे नोचने, खसोटने और उसका शोषण करने का पूरा अधिकार है। नारी का शोषण घर में भी होता है व बाहर भी होता है। आधुनिक युग बोध में स्त्री को घर की चारदीवारी से बाहर निकाल कर जीवन के व्यवहारिक क्षेत्र से जोड़ दिया है। वह घर के साथ–साथ अर्थोपार्जन के लिए घर से बाहर भी काम करने लगी है। भारतीय समाज के भौतिकवादी परिवेश में कामकाजी नारी का शोषण तरह–तरह से होता है। कभी ये शोषण माता–पिता, बहन–भाईयों द्वारा, कभी मंगेतर या प्रेमी के द्वारा, कभी अधिकारी या सहकर्मी द्वारा तो कभी कामकाजी नारी का शोषण विवशता से होता है, कभी पदोन्नति की ललक में, कभी बॉस को खुश करने की इच्छा में तो कभी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा में।

कामकाजी नारी की कार्य परिधि बहुत विस्तृत और व्यापक हो जाती है। अलग–अलग मानसिकता के लोगों से उसका सम्पर्क होता है। आज का जीवन अर्थ की दूरी के चारों ओर घूम रहा है। आज रिश्ते–सम्बन्ध सभी धन से तोले जाते हैं। डॉ. तेजेन्द्र पाल कौर लिखती हैं – ''अर्थ ही जीवन का विधायक है। युग का राजनैतिक और सामाजिक घटनाचक्र तत्कालिक आर्थिक प्रतिक्रिया से प्रभावित रहता है।''[6] शिक्षा के प्रचार–प्रसार में नारी जागृत हुई है। जीवन में अर्थ के महत्त्व को उसने पहचाना और अनेक व्यवसायों में पदार्पण करते हुए उसने अनेक कार्यभार संभाले। आदिकाल में नारी आर्थिक दृष्टि से पुरुष पर आश्रित थी। लेकिन वर्तमान समाज में नारी शिक्षित होकर स्वावलम्बी बनकर पुरुष के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर हर क्षेत्र में आगे बढ़ रही है। देश की आजादी के बाद बढ़ती महंगाई के कारण भारतीय शिक्षित नारी कामकाज के क्षेत्र में धनोपार्जन की इच्छा से घर की चारदीवारी से बाहर निकली है। भारतीय कामकाजी स्त्री अपने जीवन में दोहरी भूमिका निभाती है। वह दफ्तर में काम करती है तो घर का दायित्व भी निभाती है। इस दोहरी भूमिका को पूरा करने में उसकी शक्ति और समय खर्च होता है। लेकिन भारतीय परिवेश में कामकाजी नारियों का कदम–कदम पर शोषण होता है। धन कमाने के बावजूद भी ये स्त्रियाँ आर्थिक रूप से स्वतन्त्र नहीं हैं। धन के लिए वे पति की मुखापेक्षी हैं। धन वे कमाती हैं लेकिन धन पर अधिकार उनके पति का होता है। कामकाजी नारी का पुरुष प्रधान समाज में अधिकारी, राजनेता, धर्म के ठेकेदार समय–समय पर शोषण करते रहते हैं। ऐसे असंख्य उदाहरण अलग–अलग कहानीकारों ने अपनी कहानियों के माध्यम से व्यक्त किए हैं।

कामकाजी नारी का जीवन व्यस्त हो जाता है। वह घर और दफ्तर दोनों के बीच अपनी सेवाएँ देती हुई मशीन की तरह घूमती रहती है। फिर भी घर में उसे अपमान ही सहना पड़ता है। रश्मि मल्होत्रा की 'वापिसी' कहानी की नायिका कामकाजी महिला है। वह कॉलेज में प्राध्यापिका है। ससुराल पक्ष के लोग घर में उसका शोषण

करते रहते हैं – ''एक लम्बे अर्से तक वह ससुराल पक्ष के द्वारा लगाए गए झूठे प्रत्यारोपों, तानों, व्यंग्यों की भट्ठी में तपती, उनके अप्रत्याशित व्यवहार को सहती और छिपती आँखों से रोती हुई, बिसूरती हुई भी अपने विनम्रता के गुण को न भुला पाई थी, परन्तु बहू की यह अच्छाई भी तो सर्प के फन की तरह उनकी छाती पर बैठ जाती थी। उसे हर समय पर महसूस होता रहता कि दिन–प्रतिदिन एक–न–एक झूठी रिपोर्ट देकर उसे बिना वकील के कटघरे में खड़े होने को बाध्य किया जाता और रोज ही मृत्युदंड सुना दिया जाता। प्रतिदिन ही कैक्टस की तरह बिछ जाती शिकायतें।''[7] बसन्त प्रभा के कहानी संग्रह 'उधार की जिंदगी' की 'धुंध' कहानी कामकाजी महिला के पारिवारिक सम्बन्धों के क्रूर यथार्थ को अभिव्यक्त करती है। इस कहानी की सुशान्ता ने 'भाई–बहन की खातिर विवाह नहीं किया, वह बड़ी थी, माँ के मरने के बाद भाई और सुरेखा को उसने माँ की तरह लाड़ से रखा, सुशान्ता के बाप ने भी लड़की का ख्याल नहीं किया। बीबी के मरने के बाद ही किसी औरत के चक्कर में पड़ गया और सुशान्ता नौकरी करके भाई को पढ़ाती रही। बड़े होने पर उसने भाई का विवाह भी कर दिया, बहन का भी, पर इस सहानुभूति, सहनशक्ति और इतने बड़े त्याग से सुशान्ता को क्या मिला? भावज सीधे मुंह बात नहीं करती। ननद को आया ही जैसे समझती है। तीन–तीन बच्चों की देख–रेख और घर संभाल का काम सुशान्ता ने ही किया है। जब तक सुशान्ता नौकरी करती थी, तब तक कुछ मानते भी थे ये लोग। जब से काम छूटा है, घर में नौकरानी का सा हाल है।''[8]

कामकाजी स्त्री का घर में भी शोषण होता है। स्वयं उसके माता–पिता ही उसे शोषित करते हैं। अनत रमेश की कहानी 'पैवंद' की नायिका रति कामकाजी युवती है। वह चन्द्रमोहन आहूजा नाम के युवक से प्यार करती है और उससे शादी करना चाहती है। रति के माता–पिता उसकी शादी नहीं करना चाहते क्योंकि शादी के उपरांत उन्हें पैसे कमाकर देने वाला कोई नहीं होगा। कामकाजी बेटी का उसी के माता–पिता द्वारा स्वयं के घर में शोषण होता है। वे उस पर हाथ भी उठाते हैं। चन्दर रति को वहाँ से ले जाकर उससे शादी करना चाहता है ताकि रति की इच्छा पूरी हो सके लेकिन उसका पिता उसकी एक भी चलने नहीं देता बल्कि हाथ उठाता है व गालियां बकता है। कहानीकार के शब्दों में, ''चन्दर एकदम उठ खड़ा हुआ और रति की ओर मुड़ा, ''रति, तू चल मेरे साथ। अभी। इसी पल। मैं अब एक मिनट भी यहाँ नहीं रुक सकता। जाने कैसे तू पूरी उम्र यहाँ बिताने का साहस रखती है।'' उसने रति की ओर हाथ बढ़ाया कि बुड्ढा बीच में आ गया। दरवाजे पर तीनों छोटे लड़के और पीछे खड़ी मीना आतंकित हो आए थे। बुड्ढे ने रति का कंधा पकड़ा और हमारी ओर देखते हुए उसे अन्दर धकेल दिया। वह निरन्तर हमें गालियाँ बक रहा था।''[9]

सुधा अरोड़ा की कहानी 'बोलो भ्रष्टाचार की जय' में कामकाजी महिला और उसके आफिसर के बीच सम्बन्ध तनावग्रस्त हो जाते हैं। यह सम्बन्ध इतने बिगड़ जाते हैं कि कामकाजी महिला एक ही दिन में बुरी और कलुषित बना दी जाती है। कहानीकार के शब्दों में, ''दूसरे दिन दफ्तर पहुंची तो देखा, एक ही दिन में मैं बदतमीज, चरित्रहीन, गैर–जिम्मेदार और जाने क्या–क्या घोषित हो चुकी थी। मिस्टर मनिहार के कमरे में जाने का और कमरे से बाहर निकलने का एक नया संस्करण हरेक की जुबान पर था। मेरे साथ काम करने वाले हर सहकर्मी की निगाह में मेरे लिए भर्त्सना थी। मनिहार ने सच कहा था, दुनिया ने एक ही दिन में मुझे समझा दिया था कि मेरी हस्ती क्या थी? .... एक महीने के अन्दर मैं अपनी नौकरी से पल्ला झाड़कर, रोती–कलपती बाहर निकल आयी। पहले तबादले के आदेश लेकर, फिर इस्तीफे के कागज़ थमाकर। दफ्तर के द्वार तक भी मुझे विदा देने कोई नहीं आया। न ही दिल के दौरे के बाद अस्पताल से घर पहुंचने में मेरे पति के अलावा किसी ने मदद की।''[10] उपरोक्त कहानी के माध्यम से पता चलता है कि स्वार्थपरता तथा अवसरवादिता के कारण सहकर्मी संकीर्ण मानसिकता के शिकार रहते हैं। अपने अधिकारी को खुश रखने के लिए सभी मानवीय मूल्य एवं आदर्शों की जीवन में ऐसे लोग अवहेलना करते रहते हैं। वीरेन्द्र जैन की कहानी 'शाप–मुक्ति' में शांता कामकाजी महिला है। उसका पति बेरोजगार है। वह पत्नी के चरित्र पर सन्देह करता है तथा दोनों के सम्बन्ध तनावग्रस्त हैं। कहानीकार के शब्दों में, ''एक दिन शान्ता की मित्र कनु उसे मिलने उसके घर जाती है। वो देर रात तक बात करती है और सो जाती है। रात को तीन–सवा तीन बजे के करीब शांता निवृत होने के लिए बाहर गयी। कनु की भी आंख खुल जाती है। उसे नींद नहीं आती। थोड़ी देर में उसे रोने चिल्लाने की आवाज आती है। वह जान गयी थी कि मुकेश शान्ता का पति उसे प्रताड़ित कर रहा है और उसे मार भी रहा है। जब मेरे चिल्लाने से शांता मेरे कमरे में आयी तो मैं देखकर हैरान रह जाती हूँ, ''शान्ता के बाल उलझे हुए थे जैसे किसी ने बेरहमी से खींचे हो। चेहरे पर, हाथों पर, छाती पर जगह–जगह नाखून से खुरचे जाने के ताजा घाव थे। उनमें से खून रिस रहा था। शर्म के मारे न तो शांता चेहरा उठाकर देख पा रही थी न अपनी तकलीफ पर सिसक पा रही थी। मैं झटपट उसकी तीमारदारी में जुट गयी। मगर वह एकाएक मेरी गोदी में सिर छिपाकर बिलख–बिलख कर रोने लगी। मुझे मुकेश के इस अमानुषिक रूप पर बेहद गुस्सा आ रहा था। मैं भीतर ही भीतर तिलमिला रही थी। समझ में नहीं आ रहा था क्या करूँ, क्या नहीं कर देना चाहिए मुझे।

शांता बराबर रोये जा रही थी। रोते–रोते ही उसने मुझे बताया कि यह आदमी उसके चरित्र पर शक करता है। उसे मनचाहे तरीके से जब चाहे इस्तेमाल करना चाहता है। यदि वह मना करती है तो नये–नये लांछन लगाकर मारता–पीटता है।''[11] प्रस्तुत कहानी में कामकाजी शांता अपने पति द्वारा प्रताड़ित एवं अपमानित होती है। उसका पति बेरोजगार है। पत्नी परिवार का लालन–पालन करते हुए भी शोषित है। पति–पत्नी दोनों के सम्बन्ध नीरस एवं तनावग्रस्त हैं। भारतीय कामकाजी नारी को एक झुंझलाहट भरे और अमैत्री पूर्ण वातावरण में काम करना पड़ता है। कामकाजी नारी महत्त्वाकांक्षा, विवशता, अबोधता, असुरक्षा और कभी अवसरवादिता से प्रेरित होकर अपने बॉस या सहकर्मी के चंगुल में फंस ही

जाती है और फिर इस तरह आरम्भ होती है आजीविका की बलि देवी पर होम होती कार्यशील नारी की यातना। डॉ. रोहिणी अग्रवाल लिखती हैं, ''पुरुष अधिकारी द्वारा कामकाजी महिला का शोषण तभी सम्भव है जब स्वयं महिला की इसमें सहमति हो। जहां महिलायें आत्म–सम्मान के प्रति सचेत हों, वहाँ अपने सतीत्व व प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिए वे कोई न कोई उपाय अवश्य ढूंढ लेती हैं। यह उपाय त्यागपत्र देकर पलायन कर जाना भी हो सकता है और चारित्रिक दृढ़ता को हथियार बनाकर अधिकारी की लोलुपता पर अंकुश लगाना भी।''[12] दफ्तरों में काम करने वाली स्त्रियों को आमतौर पर पुरुषों के साथ काम करना पड़ता है और पुरुष उच्च अधिकारी उन्हें केवल स्त्री के रूप में देखते हैं। वे अपने पद का दुरुपयोग करके महिला कर्मचारी से नाजायज लाभ उठाना चाहते हैं। यदि महिला अपने उच्च–अधिकारी के प्रति समर्पित हो जाती है तो ठीक अन्यथा अधिकारी उस पर लांछन लगाता है। उसे नीचा दिखाने की कोशिश करता है।

अखिलेश की 'जल डमरू मध्य' कहानी की मनजीत कामकाजी विवाहिता स्त्री है। वह जवान और सुन्दर है। उसका अफसर यदा–कदा जब भी अवसर पाता है उसे छेड़ता है, उसका शारीरिक शोषण करने का प्रयास करता है। विवश और बेबस मनजीत आफिसर से न हां कर सकती है, ना ही न कर सकती है, क्योंकि नौकरी करना उसकी मजबूरी है। कहानी लेखक के शब्दों में, ''एक दिन शौक–शौक में चिम्मन की पत्नी मनजीत ने भी पैंट के ऊपर कुर्ता पहन लिया, कुर्ते के भीतर से उसके भारी स्तन बहुत ही ज्यादा कामोत्तेजक लग रहे थे, इस बात को वह जान चुकी थी। इसलिए उसी कुर्ते में वह अपने बॉस से मिली थी। बॉस ने कुर्ता उतारकर खुद पहन लिया था और ठठाकर हंसे थे, देखो चिम्मन का कुर्ता मैंने पहन लिया है। वह बांहों में वक्ष संभालते हुए बोली, मैं कुर्ता नहीं हूँ'', बॉस ने उसकी बांहों को खोल दिया, ''तुम न कुर्ता हो न ब्रा। तुम मेरा प्यार हो।'' वह बॉस के सीने से सट गई, ''न ये कुर्ता आपका है न मैं आपकी हूँ। ये कुर्ता चिन्मय का है और मैं भी।'' बॉस ने जोर से हंसकर उसे भींच लिया था। घर लौटकर मनजीत ने चिन्मय के सामने कुर्ता उतारा था तो वह चौंक पड़ा था, ''तुमने कुर्ते के नीचे ब्रा पहना था। अब कुर्ता उतारा है तो ब्रा गायब है। कहाँ गई तुम्हारी ब्रा।''[13] प्रस्तुत कहानी में आफिसर मनजीत का दैहिक शोषण करता है। दफ्तर में ही उससे सम्भोग करता है लेकिन विवाहिता मनजीत इस बात को अपने पति से नहीं कह सकती,उसे नौकरी तो करनी है, नौकरी करना उसकी मजबूरी है।

कामकाजी महिला अपने पुरुष सहयोगियों के साथ स्वस्थ, अस्वस्थ, सहज, असहज दोनों प्रकार के सम्बन्धों को जीती है। अखिलेश की कहानी 'शापग्रस्त' में प्रमोद वर्मा अपने दफ्तर में काम करने वाली स्टेनोग्राफर राधा अग्रवाल का मानसिक शोषण करता है, दफ्तर में जाकर वर्मा बोला, 'हैलो राधा कैसी हो?' इस शर्मिले आदमी को ये बेफिक्री देखकर वह चकित हो गई। किसी तरह बोली, 'नमस्ते।' अरे हाथ मिलाइए। हमें भी तो कभी–कभी लिफ्ट दे दिया करिए।' वह निर्लजता से हंसा। राधा अग्रवाल का चेहरा आधा क्रोध, आधा शर्म से लाल हो गया।''[14] इसी प्रकार सुरेन्द्र तिवारी की कहानी 'दूसरे सिरे पर' भी सहकर्मी द्वारा कामकाजी स्त्री का मानसिक शोषण का उल्लेख मिलता है। कहानी में रजनी जिस विभाग में नौकरी करती है उसी में मोहित उसका सहकर्मी है। ''लंच खत्म कर रजनी अपना लंच बाक्स रखने आई तो मोहित ने झट कहा, ''रजनी जी जरा देखिये तो, टाइपिंग ठीक हो रही है या नहीं?'' रजनी ने एक बार झुककर कागज की ओर देखा और उसका चेहरा लाल हो उठा, ''इडियट'' कहकर वह मुड़ी और कमरे से बाहर निकल गई। मोहित पहले तो हतप्रभ हुआ फिर हंस पड़ा। उसने कागज़ पर एक नजर दौड़ाई – तुम चांदनी–सी मधुर, उज्ज्वल, मैं प्यार तुम्हें करता हूँ।'' कागज को मशीन से उतारकर हाथ में लिये वह अपनी कुर्सी पर आ बैठा। वह काफी प्रसन्न था, उसे लग रहा था कि आज की बाजी वह जीत जायेगा।''[15] प्रस्तुत कहानी में रजनी मोहित के इस दुःसाहस से खिन्न होती है। वह उसके इस बेहुदे, मनमाने प्यार के इजहार से मानसिक रूप से शोषित होती है।

आजकल के भौतिकवादी वातावरण में किसी भी जगह नौकरी पाने के लिए या तो पैसे देने पड़ते हैं या फिर लड़की को अपने शरीर का सौदा करना पड़ता है। अनत रमेश की कहानी 'अगले साल दिसम्बर में' की नायिका बारहवीं पास, अच्छी टाईपिस्ट, नेक, मेहनती और ईमानदार लड़की है। उसको नौकरी की तलाश करते–करते एक अधिकारी की हवश का शिकार होना पड़ता है। कहानी में चोपड़ा अधिकारी के रूप में कार्यरत है, उसका सहकर्मी उसके बारे में कहता है कि, ''शादी–शुदा होने के बावजूद वह गाहे–बगाहे मेरे कमरे की चाबी मांगता रहता था। अपनी गर्ल फ्रैण्ड के साथ कुछ घण्टे बिताने के लिए और उसकी गर्ल फ्रैण्ड भी कौन? वो मरियल, बीमार–सी लड़की, जो दो महीने पहले हमारे दफ्तर में टाईपिस्ट आई थी, रह गई थी। चोपड़ा ने उसे बीच में ही लपक लिया था और तब से उसे नौकरी के झांसे में लटकाये–लटकाये घूमता रहता था।''[16] नौकरी के लिए लड़की का दैहिक शोषण एक अधिकारी के द्वारा किया जाता है। भारतीय समाज में कामकाजी महिला के व्यावसायिक सम्बन्ध अपने सहयोगियों के साथ अच्छे भी होते हैं और कहीं–कहीं कर्कश और विरोधी भी होते हैं। प्रायः देखा गया है कि प्रशासन में बैठे पुरुष अधिकारी उसे सहयोग देने की अपेक्षा अधिकतर उसके शोषण का प्रयास करते हैं और शोषण कई स्तरों पर व कई दृष्टियों से किया जाता है, क्योंकि पुरुष अधिकारी की दृष्टि नारी के प्रति वासनात्मक रहती है। दीपक शर्मा की कहानी 'ढक्कन' में मंजू और उसका पति दोनों एक ही दफ्तर में काम करते हैं। वे दोनों पदोन्नति चाहते हैं। इस पदोन्नति को पाने के लिए पति अपनी पत्नी को बॉस को रिझाने के लिए उसके साथ दिल्ली भेजता है। बॉस और मंजू दोनों दिल्ली में दफ्तर के गैस्ट हाऊस में न रुक कर एक होटल में रुकते हैं। बॉस की पत्नी को अपने पति पर सन्देह हो जाता है। कहानी लेखिका के शब्दों में, ''मैं मंजू दूबे से मिलूंगी। जब मैंने बताया मंजू दूबे आज दफ्तर नहीं आई, आज उसकी दो दिन की छुट्टी की अर्जी आई

है तो बोली, उसे मिलना जरूरी है। उसके घर का पता दे दो। ग्यारह दस पर वह दोबारा दफ्तर आई। दिल्ली वाले होटल का पता और कमरा नम्बर दो।''

मेरा अंदाजा है, ''भीड़ में से एक दूसरे पुरुष ने कहा, ''बॉस की पत्नी ने यहाँ से तीन बीस वाला हवाई जहाज पकड़ा, चार पच्चन पर वह हवाई जहाज से उतरी, पांच तीस पर वह होटल पहूंची, पांच पैंतीस पर वह लिफ्ट में सवार हुई। पांच चालीस पर उसने बॉस को मंजू के साथ देखा, पांच इक्तालीस पर उसने बॉस पर गोली चलाई, पांच ब्यालिस पर उसने मंजू पर गोली चलाई, पांच पैंतालिस पर .....।'' ''माँ मेरी वजह से मरी है, पापा'', मैं फट पड़ी, ''मैं जब स्कूल से आई थी तो वह नीचे सीढ़ियों के गलियारे में खड़ी थी। उसे मैंने बताया था – माँ हवाई जहाज से दिल्ली गई है ....।'' ''अजीब बात है, ''पापा बौखलाए, ''तुमने मुझे नहीं बताया, मंजू दिल्ली गई और वह भी हवाई जहाज से ....।'' ''अब कोई नया तमाशा मत खड़ा करिये'' तीसरे पुरुष स्वर ने पापा पर लगाम चढ़ाई। ''लड़की की माँ मर गई है। लड़की से अब ऐसे सवाल–जवाब मत करिये।''[17] प्रस्तुत कहानी में मंजू पदोन्नति के लिए अपने पति की इच्छा से अपने ही आफिसर को शारीरिक रूप से समर्पित होती है। दूसरे शब्दों में कहें तो एक आफिसर पदोन्नति के लिए एक नारी का शारीरिक शोषण करता है। आफिसर की पत्नी अपने पति की इन घिनौनी और कुत्सित इच्छाओं से परिचित है। इसलिए दोनों को सदा नींद में सुला देती है। राकेश वत्स की कहानी 'सावित्री' में एक कामकाजी महिला जो कि गर्भवती है उसे भरपेट खाना भी नहीं मिलता। तब भी वह दूसरों के घरों में जाकर मेहनत मजदूरी करती है तथा घर की मालकिन द्वारा बार–बार प्रताड़ित होती है तथा उसका मानसिक शोषण किया जाता है। कहानीकार के शब्दों में, ''बार–बार समझाकर देख लिया, पर कोई फर्क नहीं पड़ता, आगे से कोई जवाब भी तो नहीं देता। लगता है कि जैसे अफीम खाये डोल रही हो। झिड़कती इसलिए नहीं कि अभी से पांव भारी लिये फिर रही है। कम्बखत! ऐसी हालत में औरत का दिल दुखाना अच्छा नहीं होता। मुझे तो इस पर तरस आता है ....।

थोड़ी देर बाद पत्नी की आवाज मानो मुझ तक सुर पहुंचाने के उद्देश्य से कुछ ज्यादा ही अस्वाभाविक होकर गूंजने लगी, ''देखो काम करना है तो ठीक से करो, नही तो अपनी सास को ही भेजा करो। इस तरह से नहीं चलेगा। इस घर में। अगर सफाई ठीक ढंग से करनी नहीं आती तो घर बैठा करो। यहाँ आने की जरूरत नहीं है। समझी!'' बेइज्जत कर देने वाली इन झिड़कियों का सावित्री ने जवाब तो दिया, लेकिन इन शब्दों में ''माँ जी, रात की कोई बासी रोटी पड़ी होगी?''[18] प्रस्तुत कहानी में घर की मालकिन द्वारा नौकरानी का मानसिक शोषण किया जाता है।

कामकाजी महिला का मानसिक, आर्थिक, दैहिक, मनोवैज्ञानिक और शारीरिक रूप से भी शोषण करना महिला के आफिसर अथवा कर्मचारी अपना अधिकार समझते हैं। डॉ प्रमिला कपूर लिखती हैं कि, ''भारत में चिरकाल से स्त्री के साथ पुरुष सेक्स के भूखे हैं। फलस्वरूप स्त्री चाहे अभियंता हो, इंजीनियर हो, डाक्टर हो, वकील हो, छात्रा हो, उनके लिए तो बस स्त्री ही है।''[19] और स्त्री का भोग करना भारतीय पुरुष अपना अधिकार समझता है। राजेन्द्र श्रीवास्तव रंजन की कहानी 'अपराधी कौन' की सुनीता कामकाजी नारी है। कहानीकार के शब्दों में, ''वह दो वर्ष पहले नियुक्त हुई थी, इस कम्पनी में। सीधी ही भर्ती द्वारा स्टेनोग्राफर। राकेश पहले से यहाँ था, क्लैरिकल कैडर में। पहली ही नजर में ही उसने पसंद कर लिया था सुनीता को। पहले वह स्टेशनरी डिपार्टमैंट में था जो कि दूसरी मंजिल पर था। जोड़–तोड़ भिड़ाकर उसने अपनी टेबल बदलवाई थी और मार्किटिग डिपार्टमैंट में, सुनीता के पास हॉल में आ गया था। यह बात हाल में सबको पता थी। खुद उसने घर आकर बेधड़क बात की थी सुनीता के साथ। शादी के लिए हाथ मांगा था। तय हुआ था कि मार्च में राकेश की बड़ी दीदी के विवाह के बाद राकेश–सुनीता परिणय सूत्र में बंध जायेंगे।'' ''एक दिन सुनीता को दफ्तर में देर हो जाती है। एक सुनसान जगह पर मोटर खराब हो जाती है। उसकी मदद करने वाला उसका बलात्कार कर देता है।''

''शाम को घर पहुंचते–पहुंचते वह अपने को टूटा–सा महसूस कर रही थी। फिर रोज की तरह चाय बनाने के लिए वह किचन में जा घुसी, किन्तु आज उसने दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया। मिट्टी के तेल के टिन को वह एकटक देखने लगी। ढेरों विचार उसके मन में उमड़–उमड़ रहे थे। अगले दिन के अखबार की एक छोटी–सी खबर उसकी आँखों के सामने नाचने लगी – बलात्कार की शिकार लड़की द्वारा 'आत्महत्या।' दफ्तर की शोक सभा और दो मिनट का मौन वह साफ देख रही थी। सहकर्मियो की आंखें आंसुओं से नम देखी उसने। फिर बेहतर चाहने लगी कि अपनी मौत पर अफसोस करने वाले ऐसे लोगों के मुंह पर थूके वह। पसीने से तर–बतर हो उठी वह। 'मेरी मौत के लिए कौन जिम्मेदार होगा?' वह सोच रही थी और फिर सोच रही थी। उसकी आँखों के सामने उस व्यक्ति का चेहरा बार–बार घूमने लगा, जिसने उसका शील भंग किया था। अचानक वह चेहरा धुंधला पड़ते–पड़ते लुप्त हो गया और किसी तिलिस्म की मानिंद उसकी जगह सैंकड़ों–हजारों चेहरे दिखाई देने लगे, राकेश, उसके दफ्तर के लोग, मौहल्ले वाले, उसके रिश्तेदार .... 'एक बलात्कार तो लड़की सह भी ले, पर तुम जैसे नपुंसकों के सैंकड़ों–हजारों बलात्कार सहना मुश्किल है। वह बहुत उत्तेजित हो उठी थी।''[20] प्रस्तुत कहानी में कामकाजी लड़की का बलात्कार करने वाला तो एक व्यक्ति है लेकिन उस लड़की के अपने ही दफ्तर के लोग चटखारे लेकर जब उस घटना का बार–बार जिक्र करते हैं तो बलात्कार की शिकार लड़की को महसूस होता है कि उसके अपने दफ्तर के सहयोगी उसका मानसिक शोषण कर रहे हैं।

कामकाजी स्त्री परिवार की जिम्मेदारी और रोजगार के दायित्व को निभाने में अनेक बार वह आर्थिक शोषण का शिकार होती है। उससे काम अधिक लिया जाता है और पैसे कम दिए जाते हैं। कभी–कभी मालिक द्वारा रखे गए कर्मचारी नारी की विवशता का लाभ उठाने

के लिए उसका आर्थिक शोषण करते हैं। हिमांशु जोशी की कहानी 'किसी एक शहर में' सेठ के कर्मचारी फर्म में काम करने वाली नारी का आर्थिक शोषण करते हैं। पिछले महीने उस स्त्री को एक सौ पच्चीस रुपये मिले थे, लेकिन इस बार उसे केवल नब्बे रुपये मिले थे। कम पैसे देकर अधिक पैसों पर उसके हस्ताक्षर लिए जाते हैं। बाकी के पैसे लाला द्वारा रखा गया कर्मचारी डकार जाता है। कहानीकार के शब्दों में, ''नब्बे'' वह कोशिश करती हुई इस तरह से देखने लगती है, जैसे कुछ हुआ ही नहीं। उसके उजले गालों पर नक्शे की नदी की तरह एक नीली–सी नस है, वह ऐसे क्षणों में सहसा अधिक गहरी हो जाती है। पहले की तरह फिर हौले–हौले धरती नापती फुटपाथ पर चलने लगती है, नोटों की मुड़ी–मुड़ी परतें मेरे हाथ में थमाकर। पिछले महीने उसे एक सौ पच्चीस रुपये मिल गए थे। वह कहती थी कि मई से कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड हो गई है। गोल–कीपर (पार्टन सेन गुप्ता) की डिक्टेटरशिप अब चलेगी नहीं। पे–स्केल भी रिवाइज हो जाएँगे। कम–से–कम डेढ़ सौ तो मिलेंगे ही .....। नहीं, तो लाला जी से कहूंगी। उनका बिहेव अच्छा है। लेकिन जब वे टूर पर बाहर रहते हैं तो गोल–कीपर तंग करता है। कम तनख्वाह देकर अधिक पर दस्तखत करवा लेता है।''[21]

डॉ. इन्दु प्रकाश ऐरन की कहानी 'लतिका' में बुआ के द्वारा लतिका का आर्थिक शोषण चित्रित हुआ है। लतिका के माता–पिता बचपन में ही मर जाते हैं। वेंकटेश और बसन्त लतिका के दो छोटे भाई हैं जो पूर्ण रूप से बुआ पर ही आश्रित हैं। बुआ पति–परित्यक्ता नारी है। उसकी तीन बेटियां हैं, वह उन तीनों से भी धंधा करवाती है। बुआ वेंकटेश की माता–पिता की मृत्यु के बाद उसकी बड़ी बहन को बम्बई नौकरी दिलवाने के बहाने ले आती है। यहां बम्बई में वह लतिका को एक अड्डेबाज शातिर, पुलिस मुखबिर परवेज खान के हाथों पचास हजार में सौंप देती है। यहां से शुरू होता है लतिका का दैहिक व आर्थिक शोषण। बीस हजार बुआ को नकद मिले, तीस हजार की किश्तें बंध गयी। खान लतिका को रात को एक हजार रुपये लेकर पेश करता तो लतिका को मात्र पांच सौ, कभी–कभी वह भी नहीं देता। कहानी लेखिका के शब्दों में, ''लतिका सांवली, बड़ी आँखों वाली, अधकचरी उम्र में, सहमी–सहमी गेस्ट हाउस अड्डे में रखी गयी। पुलिस इंस्पेक्टर आया। लतिका ने सोचा उसकी जान बच सकती है। पर वह हफ्ते की रकम लेकर अपनी बुलेट मोटर साइकिल पर चला गया। अड्डे में और भी लड़कियाँ थीं। कुछ निकल भागने के चक्कर में थी। कुछ पेशे को हिकारत से देखती। मीना, रश्मि ऐसी ही थीं। मीना भागी थी, किंतु खान के आदमियों ने पकड़ निकाला, बहुत मारा, उससे ज्यादा धमकाया – साली, हरामजादी, रण्डी क्या पायेगी अब मायका या ससुराल। अमूमन लतिका एक हजार रुपये में एक रात को भेजी जाती। लेकिन उसे मिलते बस पांच सौ, कभी–कभी वह भी नहीं। बाकी हकीकी तौर से खान को जाते। इस पर तो लतिका का कोई बस था नहीं, न ही इसकी किसी लोक अदालत में अपील ही थी।''[22] प्रस्तुत कहानी में एक तेरह वर्ष की अनाथ लड़की का दैहिक एवं आर्थिक शोषण होता है। वह लाचार और विवश होकर अपनी ही बुआ व खान के हाथों शोषित होती है। यह उसके जीवन की विडम्बना ही कही जायेगी कि उसकी अपनी बुआ ही उसका जीवन नरक बना देती है। वह देह व्यापार के पिंजरे से चाहकर भी मुक्त नहीं हो सकती।

अतः शिक्षा, कार्यक्षेत्र, नौकरी, कार्यक्षमता, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में भले ही स्त्री ने पुरुष को पीछे छोड़ दिया हो, फिर भी वर्तमान समाज में पुरुष ही श्रेष्ठ माना जाता है। पुरुष प्रधान समाज आधुनिक नारी को परम्परा और मर्यादा की जंजीरों से बांध कर रखना चाहता है। हिन्दी जगत के सुप्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त ने भी आधुनिक नारी को असहाय, दुःखी और दीन–हीन मानकर लिखा है कि –

''अबला जीवन हाय! तुम्हारी यही कहानी।
आंचल में दूध और आँखों में पानी।।''[23]

महादेवी वर्मा ने नारी को क्षमा और प्रेरणा का आधार माना है। छायावाद के सुप्रसिद्ध कवि जयशंकर प्रसाद ने भी नारी की उच्च एवं आदर्श रूप में कल्पना की है। वे कहते हैं कि –

''नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजत नग, पग, तल में,
पीयूष स्त्रोत सी बहा करो,
जीवन के सुन्दर समतल में।।''[24]

निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि समकालीन कहानी में कामकाजी महिला के शोषण की व्यथा–कथा बहुत ही मार्मिक और हृदय विदारक है। कामकाजी स्त्री अपने जीवन में अनेकों बार नौकरी पाने के लिए, पदोन्नति के लिए, प्रेम के जाल में फंसकर, परिवार में, दफ्तर में मानसिक और दैहिक रूप से शोषित होती रहती है। वह कभी अवसरवादिता के कारण, कभी अबोधता के कारण, कभी विवशता व असुरक्षा आदि से प्रेरित होकर पुरुष के चंगुल में फंसकर उसके शोषण का शिकार होती रहती है। भारतीय कामकाजी स्त्री के शोषण के सन्दर्भ में डॉ. रोहिणी अग्रवाल लिखती हैं कि, ''पुरुष अपनी अधीनस्थ महिला के साथ खिलवाड़ करने को सदैव लालायित रहता है, यदि वह मालिक है, जब उसकी स्थिति सावन के अन्धे की तरह है। वह महिला के तन पर, व्यक्तित्व पर, समय पर, स्वतन्त्रता पर व भविष्य पर अपना एकाधिकार समझता है।[25] भले ही आज की शिक्षित नारी पुरुष के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर जीवन के क्षेत्र में कार्यरत हुई हो, भले ही वर्तमान समय में नारी की मानसिक स्थिति, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, प्रेम आदि के सम्बन्ध की दृष्टि में आमूल–चूल परिवर्तन हुआ भी हो लेकिन इस सब के लिए उसे बहुत बड़ी कीमत भी चुकानी पड़ी है। इसके लिए उसे अन्दर से बाहर से टूटना भी पड़ा है। उसे घर व दफ्तर में अपनी कार्यकुशलता, समर्पण व त्याग के रास्ते पर चलकर आगे बढ़ना पड़ा। इस दोहरी भूमिका को पूरा करने में उसकी शक्ति और समय खर्च हुआ है। सुबह से शाम तक नौकरी की किट–किट में मर–खपकर जब वह घर लौटती है तो उसे अनेक पारिवारिक दायित्व निभाने पड़ते हैं। पति से लेकर बच्चे तक, माँ–बाप, भाई–बहन, सास–ससुर,

ननद–देवर सभी की उससे अतिरिक्त अपेक्षाएं हैं, किन्तु उसकी अपेक्षाओं और आकांक्षा का ध्यान रखने वाला विरला ही कोई होगा। विवाह से पहले नौकरी करती नारी को अपने परिवार के लिए तपना पड़ता है, तो विवाह के पश्चात् अपने पति के परिवार के लिए मानो तिल–तिल कर गल कर सबको सन्तुष्ट करना ही उसकी नियति है। घर और दफ्तर या काम की अन्य जगहों में उसे विभिन्न प्रकार के जो मानसिक तनाव सहने पड़ते हैं, भावनात्मक और संवेदनात्मक स्तर पर जो मानसिक संघर्ष झेलना पड़ता है, निश्चित रूप से समकालीन कहानी में उसे बड़ी ईमानदारी से चित्रित किया गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डॉ. हरदयाल, समकालीन अनुभव और कविता की रचना की प्रक्रिया, पृ. 9*
2. *डॉ. पुष्पपाल सिंह, समकालीन कहानी युगबोध का संदर्भ, पृ. 87–101*
3. *धनंजय, समकालीन कहानी : दिशा और दृष्टि, पृ. 19*
4. *डॉ. राजेश रानी, भारतीय महिला कथाकारों के उपन्यासों में चित्रित जीवन मूल्य, पृ. 104*
5. *डॉ. शीला रजवार, स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य में नारी के बदलते संदर्भ, पृ. 202*
6. *डॉ. तेजिन्द्र पाल कौर, आधुनिक हिन्दी साहित्य में मूल्य दृष्टि का अन्तर्भाव, पृ. 34*
7. *रश्मि मल्होत्रा, वापिसी (अशेष यात्रा), पृ. 53*
8. *बसन्त प्रभा, धुंध (उधार की जिंदगी), पृ. 23*
9. *अनत रमेश, पैवंद, अगले साल दिसम्बर में, पृ. 66–67*
10. *सुधा अरोड़ा, बोलो भ्रष्टाचार की जय, महानगर की मैथिली, पृ. 9*
11. *वीरेन्द्र जैन, शाप–मुक्ति, मैं वही हूँ, पृ. 69–70*
12. *डॉ. रोहिणी अग्रवाल, हिन्दी उपन्यासों में कामकाजी महिला, पृ. 207*
13. *अखिलेश, जल डमरू मध्य (शापग्रस्त), पृ. 148*
14. *अखिलेश, शापग्रस्त, पृ. 14–15*
15. *सुरेन्द्र तिवारी, दूसरे सिरे पर, आशंकित अन्धेरा, पृ. 137–138*
16. *अनत रमेश, अगले साल दिसम्बर में, पृ. 20*
17. *दीपक शर्मा, ढक्कन, रण–मार्ग, पृ. 50–51*
18. *राकेश वत्स, सावित्री, इन हालात में, पृ. 18–19*
19. *डॉ. प्रमिला कपूर, कामकाजी भारतीय नारी, पृ. 107*
20. *राजेन्द्र श्रीवास्तव रंजन, अपराधी कौन, अभी वे जानवर नहीं बने, पृ. 35–36*
21. *हिमांशु जोशी, मेरी श्रेष्ठ प्रेम कहानियाँ, पृ. 23*
22. *डॉ. इन्दुप्रकाश ऐरन, लतिका, इन्द्र धनुष, पृ. 3*
23. *मैथिलीशरण गुप्त, यशोधरा, पृ. 15*
24. *जयशंकर प्रसाद, कामायनी, लज्जा सर्ग, पृ. 20*
25. *डॉ. रोहिणी अग्रवाल, हिन्दी उपन्यास में कामकाजी महिला, पृ. 220*